वैश्वीकरण और खेती-बाड़ी अधिग्रहण :

'एक ब्रेक के बाद' उपन्यास के संदर्भ में।

(जिन्सी जोसफ, शोध छात्रा, एन.एस.एस हिन्दू कॉलेज, चांगनाचेरी।)

सारांश: जब भी वैश्वीकरण और उससे उपजी बाज़ारीकरण पर चर्चा होती है तो अलका सरावगी के उपन्यासों की ओर अनायास ध्यान चला जाता है। अलका सरावगी ने जिस लगाव से वैश्वीकरण के आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक पक्षों पर चर्चा की है वह बेहतरीन है। उनका उपन्यास 'एक ब्रेक के बाद' भी ऐसा है। भारत जैसे विकासशील देश में आज भी किसानों की दशा नहीं सुधरा और वे हमेशा संधर्ष करते रहे। प्रस्तुत अध्ययन में 'एक ब्रेक के बाद' के कॉपरेटिव जगत के उच्च पद पर नियुक्त पात्रों द्वारा वैश्वीकरण और उसके फलस्वरूप हुई भूमि अधिग्रहण पर चर्चा की गई है।

मूल शब्द: वैश्वीकरण, भूमि अधिग्रहण, औद्योगिकीकरण आदि।

आमुख: वैश्वीकरण से उपजी औद्योगिकरण एवं मशीनीकरण के साथ-साथ बाज़ारीकरण तथा शहरीकरण के फलस्वरूप आज किसानों और गाँव की स्थिति बद से बदत्तर होने लगी। कृषि योग्य भूमि के व्यावसायिक उत्पादन केलिए अधिग्रहण आज किसानों की ज़िंदगी का अभिशाप बन गया। बहुराष्ट्रीय कंपनियां उद्योग, शैक्षणिक संस्था, फ्लाइट, खनन जैसे परियोजनाओं के बहाने किसानों की ज़मीन बड़ी मात्रा में हडप लेती है। इसके पीछे का एकमात्र लक्ष्य अपनी आर्थिक लाभ है। इस लूट में सरकार भी उन्हें निहायत सहायता प्रदान करती है। फलस्वरूप गाँव गरीबी और बेकारी का शिकार बनकर हाशिएकृत बन जाता है। इस सम्बंध में पुष्पाल सिंह ने ठीक ही कहा है कि -" भूमंडलीकरण की आर्थिकता ने जहाँ समाज के एक वर्ग को, भले ही उसका प्रतिशत अत्यन्त न्यून हो, कुछ ही वर्षों में एक अकल्पनीय समृद्धि दे डाली और उसे बाज़ारवाद- उपभोकवाद का

परिचालक, कारक और नियंता बना दिया, तो दूसरी ओर जो गरीब था, गरीबी की रेखा से नीचे ज़िन्दगी खचेड़ रहा था,उसे और भी गरीब बना डाला। गरीबी-अमीरी के बीच असमानता की एक दुर्लध्य खाई ने समाज को सीधे-साधे दो वर्गों में बांट कर रख दिया, इस रूप में कि वह खाई दिनोदिन और चौडी होती जा रही "(१)

भारत की खेती पर विश्व बाज़ार की नज़र है। पहले किसान फसल का कुछ हिस्सा बीज के रूप में अपने पास बचाकर रख लेते थे। अब तो बीज के क्षेत्र में बहुराष्ट्रीय कंपनियां उतर गई हैं। उनसे खरीदे गए बीज को सहेजकर बीज के रूप में नहीं रखा जा सकता। उनसे केवल एक ही बार फसल ली जा सकती है। वैश्विकरण की तहत में आकर हमारी खेती पूरी तरह बहुराष्ट्रीय कंपनियों का गुलाम बन गए। तमाम सरकारी प्रयासों के बाद भी गाँव की स्थिति जैसी की तैसी रही। अलका सरावगी अपने उपन्यास 'एक ब्रेक के बाद' में इन परिस्थितियों को नए कोण से दर्शाने की कोशिश की है। बहुराष्ट्रीय कंपनियों की नज़र में गांववाले सिर्फ मूर्ख होते है। उनके ज़मीन और संपत्ति का कुछ मूल्य नहीं है। " के.वी ने अपने बीस साल पुराने रसोइए रमा को बुलाया था जो हर साल बिहार के अपने गाँव दरभंगा में भारी ब्याज पर कर्ज लेकर लड़की की शादी करता था या अपनी पत्नी की किसी-न- किसी बीमारी से जूझता था। खुद के.वी से वह पंद्रह-बीस हज़ार रुपये एडवांस के नाम पर ले चुका था। उसकी खेती- बारी उसके परिवार का पेट भरने लायक भी जुगाड़ कर पाती थी, इसमें के.वी को सन्देह था। रमा ने बताया कि डीज़ल के पम्प से पानी निकलनेवाली मशीन ही छोटे किसानों के जीवन में काम आनेवाली मशीन है। अगर तुम्हें बिना बिजली के शरीर की ताकत से चलनेवाली ऐसी मशीन लगभग मुफ्त में दी जाए, जिससे तुम पानी निकालकर खेतों की सिंचाई कर सको, तो तुम ले लोगे?- के.वी ने पूछा। "क्यों नहीं बाबू" – रमा की आंखों में उसी तरह चमक आ गई जैसी कि कारपोरेट कंपनियों की चमकीली वार्षिक रपट में लगी किसानों की तस्वीरों में होती हैं- " लेकिन बहुत ताकत लगानी पड़े तो मुश्किल है। आप तो जानते

हैं हर समय तो गाँव में ज़्यादातर बूढ़े लोग रहते हैं जो बीमारी से परेशान रहते हैं । हमारी जनाना लोग में तो दम रहा नहीं। कितना रुपया हमें देना पड़ेगा बाबू मशीन का?" (२) यह सूक्ति प्रसिद्ध है कि भारतीय किसान कर्ज में ही जन्म लेता है और कर्ज में ही दम तोड़ देता है। " गुरुचरण ने उस गाँव की केस स्टडी इस मकसद से की थी कि वह अपनी कम्पनी को रास्ता दिखा सके। यही तरीका है इन मूर्खों से निपटने का। अपनी दो कौड़ी की ज़मीन से चिपके रहेंगे। दो कौड़ी की फसल उगाएंगे। कर्ज हो जाएगा तो आत्महत्या कर लेंगे। पर देश का विकास नहीं होने देंगे। सुप्रीम कोर्ट ने फैसला दिया है कि सरकार कहीं पर भी देश के हित केलिए ज़मीन ले सकती है। इस तरह की ज़मीन सरकार की संपत्ति हो सकती है। उसका वह चाहे जैसे इस्तेमाल करें।"(३) इन ज़मीन को सरकार मनमोहक दामों पर बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को उपलब्ध करा रही है। पुलिस भी उसके हाथों का कठपुतली बन गई। आज वैश्वीक आर्थिक विचार धारा किस हद तक कलुषित हो गया है इसका चित्र इस संवाद से मिलता है-" जहां वह रह रहा था, किसी बड़ी कम्पनी ने कुछ दूर के एक गांव में पुलिस की मदद से रातोंरात सोते हुए गांववालों को – स्त्री-पुरूष, बूढ़े-बच्चे सबको-भेड़-बकरियों की तरह उठाकर जेल भेज दिया था। उनके चूल्हे-चक्की , खेत-बाग, पशु- प्राणी सबको रौंदकर मिट्टी में मिला दिया। छह सौ से ज़्यादा घर उजाड़ दिए और उनमें से सौ एक को ज़मीन-पैसा देकर छुट्टी पा ली। बाकी सब दिहाड़ी मज़दूर बनकर या भिखारी बनकर हमारे शहरों की क्रासिंग पर भीख मांगते रहे या मर-खप गए।"(४) एक ओर इन ग्रामीणों से हमदर्दी जताते हैं तो दूसरी ओर उन्हें रातोंरात गायब करने में भी नहीं हिचकते। ' पाश्चात्य सभ्यता ने हमारे परंपरागत जीवन मूल्य, त्योहार, खान-पान , कृषि, पारिवारिक संबंध आदि सभी को अपने अधीनस्थ कर दिया। 'भूमंडलीकरण की चुनौतियां' में सचिदानंद सिन्हा लिखा है- "अब अमेरिका अपने पूंजीवादी प्रतिष्ठानों की हिट -रक्षा में धरती का विनाश कबूल करने केलिए मानसिक रूप से तैयार हो गया है।

परमाणु या जैविक युद्ध न हो भी अमेरिका अपने औद्योगिक प्रदूषण से ही संसार को नष्ट कर देगा।"(५)

निष्कर्ष

समकालीन दौर में वैश्वीकरण, औद्योगीकरण, बाज़ारवाद, शहरीकरण आदि ने गाँवो को अपनी चंगुल में रख लिया है। भारत के कई क्षेत्रों में किसानों द्वारा खुदकुशी करने का अनहोनी घटना सामने आई है । बाज़ारू संस्कृति ने ग्रामीण संस्कृति को मिटाने में तुला हुआ है । 'एक ब्रेक के बाद ' उपन्यास के माद्यम से अलका सरावगी इसका पर्दाफाश करने की कोशिश की है।

संदर्भ

1. पुष्पाल सिंह,'भूमंडलीकरण और हिन्दी उपन्यास पृ-174
2. अलका सरावगी' एक ब्रेक के बाद' ,प्रु- 147
3. वही , पृ- 170
4. वही, पृ-170
5. सचिदानंद सिन्हा, भूमण्डलीकरण की चुनौतीयां, पृ- 153